भारत की वृहत आर्थिक चुनौतियां : रिज़र्व बैंक के कुछ संदर्श *

दुव्वुरी सुब्बाराव

सर्वप्रथम तो मैं लंदन स्कूल ऑफ इकॉनोमिक्स (एलएसई) को धन्यवाद देना चाहता हूं कि उन्होंने मुझे पांचवां आइ.जी.पटेल स्मारक भाषण देने के लिए आमंत्रित किया, मेरे लिए यह सम्मान अमूल्य है।

डॉ. आइ.जी.पटेल

2. डॉ. आइ.जी.पटेल हमारी दोनों संस्थाओं के बीच एक बांड का प्रतिनिधित्व करते हैं, रिज़र्व बैंक, जिसका प्रतिनिधित्व मैं करता हूं और एल.एस.ई. जहां कि यह अभिभाषण हो रहा है। डॉ. पटेल ने बड़ी गरिमा और विशिष्टता से इन दोनों संस्थाओं को नेतृत्व प्रदान किया और हमारी ये दोनों संस्थाएं उन्हें बड़ा प्यार और सम्मान देती हैं।

3. जैसी कि समय की मांग भी है, मैंने 2010 में रिज़र्व बैंक के प्लाटीनम जुबली समारोह के समय जो कहा था, मैं उसे दोहराना चाहता हूं।

4. आप में से जिन्हें विज्ञान के इतिहास में रूचि है वे जानते होंगे कि सर इसाक न्यूटन, अन्य बातों के साथ-साथ अपनी बौद्धिक अक्खड़ता के लिए भी जाने जाते थे। जब उनके मित्र और प्रतिद्वंद्वी, राबर्ट हुक ने उनके गुरूत्वाकर्षण सिद्धांत की प्रशंसा करते हुए उन्हें लिखा तो न्यूटन ने उन्हें अपनी अक्खड़ शैली में अविशिष्ट विनम्रता के साथ -उत्तर भेजा :

''यदि मैं दूसरों के मुकाबले
थोड़ा आगे देखने में समर्थ हूं, तो यह,
इसलिए है क्योंकि मैं विशाल लोगों के कन्धों पर खड़ा हूं''

5. यह एक ऐसा कथन है जिससे मैं स्वयं को संबंधित पाता हूं। इस कठिन समय में रिज़र्व बैंक के गवर्नर के रूप में मैं उन असाधारण लोगों के प्रति कृतज्ञता के भाव से भरा हूँ जिन्होंने भारी चुनौतियों के दौरान रिज़र्व बैंक का नेतृत्व किया और भारत के आर्थिक इतिहास में अपनी छाप छोड़ी। इनमें से सबसे विख्यात हैं डॉ. आई.जी.पटेल। मैं इसी कतार में से एक के रूप में स्वयं को गौरवान्वित अनुभव कर रहा हूं।

6. भारत में अपने लंबे और विख्यात कैरियर के दौरान डॉ.पटेल ने आर्थिक गवर्नेंस के क्षेत्र में बहुत महत्त्वपूर्ण और चिरस्थायी योगदान दिया। वे संकट के समय रिज़र्व बैंक के गवर्नर थे जबकि 1970 के दशक के अंत में दूसरे तेल कीमत आघात द्वारा जनित 'भुगतान-संतुलन-संकट' से भारतीय अर्थव्यवस्था जूझ रही थी। उन्होंने आई एम एफ की विस्तारित निधि सुविधा से भारत के लिए आर्थिक सहायता प्राप्त करने में सक्रिय भूमिका निभाई जो कि उस समय के निधि के इतिहास में सबसे बड़ी थी।

7. उस समय हमारे समक्ष जो बड़ी-बड़ी वृहद् आर्थिक चुनौतियाँ थी उनके समाधान के पीछे डॉ. पटेल ही एक बड़ी बौद्धिक शक्ति थी। आज रिज़र्व बैंक के गवर्नर के रूप में मैं भारत की वर्तमान वृहद् आर्थिक चुनौतियों के समाधान में लगा हूँ। मेरे पूर्ववर्तियों ने उन चुनौतियों के समाधान में जो नेतृत्व प्रदान किया था, आज इन चुनौतियों का सामना करने में वे सदा ही मेरे लिए एक प्रेरणा का स्त्रोत रहे हैं। मेरे विचार से स्वर्गीय डॉ. आई.जी.पटेल की स्मृति को सम्मान देने के लिए मेरे पास सर्वोत्तम रास्ता यह है कि मैं भारत की वर्तमान वृहद् आर्थिक चुनौतियों की चर्चा रिज़र्व बैंक के संदर्श में करूं।

भारत-वर्तमान वृहद् आर्थिक परिप्रेक्ष्य

8. वैश्विक वित्तीय संकट (2005-08) से पूर्व की तीन वर्ष की अवधि में भारत की औसत वृद्धि दर 9.5 प्रतिशत थी, ऐसा राष्ट्र, जिसके लिए लोग सोचते थे कि 'हिंदू वृद्धि दर' ही इसका भाग्य है। यह उल्लेखनीय वृद्धि एक सराहना का सबब थी, यह द्विअंकीय वृद्धि प्राप्त करने का भी एक ट्रिगर थी।

9. आज सब कुछ उलट गया है, वृद्धि गिर गई है। मुद्रास्फीति अभी भी ऊँची है और अड़ियल है। निवेश दर में तेज़ी से गिरावट आई है और बाह्य क्षेत्र एक रिकॉर्ड उच्च 'चालू-खाते-घाटे' से ग्रस्त है। इस गिरावट से चारों ओर चिंता व्याप्त है कि शायद हम उच्च वृद्धि के प्रक्षेपपथ की पटरी से उतर गए हैं। इससे कई सवाल भी उठ खड़े हुए हैं कि क्या हमारे विकास की कथा लड़खड़ा तो नहीं रही है? क्या भारत की संभावित वृद्धि दर गिर गई है? 2003 से 2008 के दौरान

* 13 मार्च 2013 को लंदन स्कूल ऑफ इकोनोमिक्स में, भारतीय रिज़र्व बैंक के गवर्नर डॉ. दुव्वुरी सुब्बाराव द्वारा दिया गया पांचवाँ आइ.जी. पटेल स्मारक भाषण

जिन विकास चालकों ने हमारे लिए वृद्धि दिखाई थी क्या वे अभी भी बने हुए हैं? क्या विश्व, भारत के विकास के वायदे में भरोसा खो चुका है? हम द्विअंकीय वृद्धि दर तक कब पहुँचेंगे और वहाँ तक पहुँचने के लिए हमें असल में करना क्या होगा?

10. इन सब सवालों का छोटा सा जवाब मेरे पास यह है कि भारत की विकास कथा अभी भी विश्वसनीय है और दीर्घावधि के विकासचालक (ड्राइवर्स) अभी भी विद्यमान हैं। यदि हम सही कार्य करें तो हम उच्च विकास प्रक्षेपपथ की पटरी पर पुनः वापस आ सकते है, भारत की विकास कथा में अपरिहार्य कुछ भी नहीं है। हम विकास को तभी तेज़ कर सकते हैं और कल्याण कार्यों में सुधार ला सकते हैं यदि हम व्यापक, आर्थिक और गवर्नेंस सुधारों को प्रभावी रूप से कार्यान्वित करें। अगर हम इसमें असफल रहे तो कीमत चुकानी पड़ेगी और वक्त ऐसा हाथ से निकलेगा कि उसे वापस लौटाना कठिन होगा।

11. सरकार को इस सब के केंद्र में होना होगा और आर्थिक पुनरुद्धार की प्रक्रिया का नेतृत्व करना होगा। एक केंद्रीय बैंक के नाते और वित्तीय क्षेत्र के बड़े घटकों के विनियामक के नाते रिज़र्व बैंक को भी इसमें एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभानी होगी। आज मैं आपके समक्ष कुछ महत्त्वपूर्ण वृहद् आर्थिक चुनौतियों पर रिज़र्व बैंक के परिप्रेक्ष्य में चर्चा करूँगा।

12. खास तौर से मैं तीन चुनौतियों पर चर्चा करूँगा :

i. वृद्धि-मुद्रास्फीति गतिशीलता का प्रबंधन

ii. बाह्य क्षेत्र की भेद्यता को कम करना

iii. राजकोषीय समेकन की राजनैतिक आर्थिकी का प्रबंधन

पहली चुनौती : वृद्धि-मुद्रास्फीति गतिशीलता का प्रबंधन

वृद्धि

13. विश्व के वित्तीय संकट ने संसार की लगभग हर एक अर्थव्यवस्था पर असर डाला है और भारत कोई अपवाद नहीं था, लेकिन हम अन्य उभरती अर्थव्यवस्थाओं के मुकाबले काफी पहले इस संकट से उबर गए। 2008-09 के संकट के वर्ष में वृद्धि दर गिरकर 6.7 प्रतिशत हो गई परंतु यह उसके बाद संभल गई। असल में संकट के बाद के दो वर्षों, 2008-09 तथा 2009-10 में वृद्धि औसतन 9.0 प्रतिशत रही जो कि संकट के पूर्व के तीन वर्षों में 9.5 प्रतिशत की औसत वृद्धि दर की तुलना में लगभग बराबर ही थी। तथापि पिछले वर्ष 2011-12 में वृद्धि दर गिर कर 6.2 प्रतिशत पर आ गई और पहले अग्रिम आकलन दर्शाते हैं कि इस साल यह वृद्धि और भी गिर कर 5.0 प्रतिशत हो जाएगी, जो कि एक दशक में सबसे कम होगी (चार्ट-1)।

14. नवीनतम गिरावट की प्रवृत्ति को समझने के लिए आवश्यक है कि पहले संकटपूर्व की तेज वृद्धि को समझें। संकटपूर्व की अवधि में भारत की वृद्धि में तेज़ी के लिए कई व्याख्याएँ प्रस्तुत की गई हैं।1990 के दशक में किए गए आर्थिक सुधारों का प्रभाव, वैश्विक अर्थव्यवस्था के साथ

चार्ट 1 : जीडीपी वृद्धि में तेज़ गिरावट

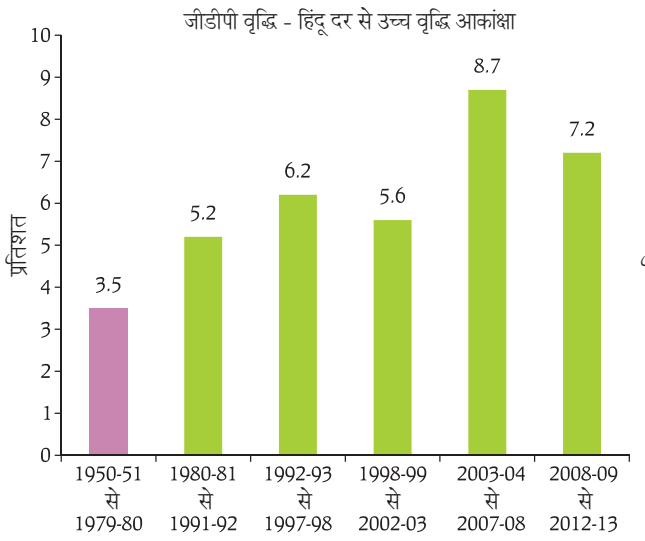

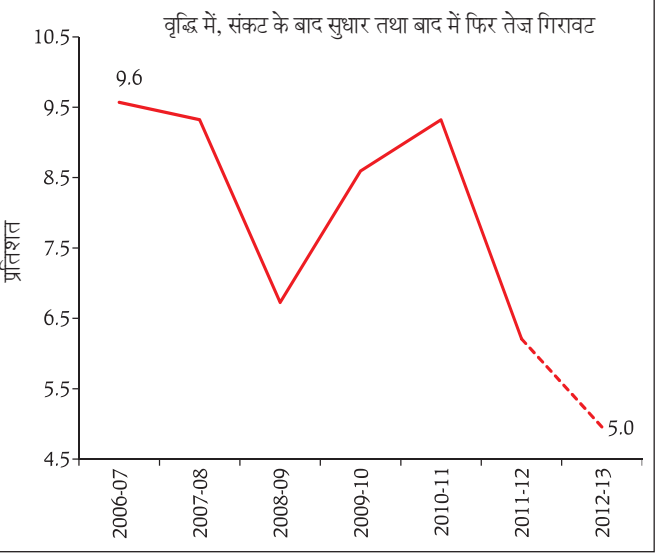

भारत का तेज़ी से एकीकरण, उद्यमशीलता बढ़ना, तथा उत्पादकता में वृद्धि।

15. इन सब कारकों के नीचे जो सबसे बड़ा सहारा था, वह था, क्षमता में भारी वृद्धि क्योंकि निवेश 2003-04 के जीडीपी के 26.9 प्रतिशत से बढ़कर 2007-08 में 38.1 प्रतिशत हो गया (चार्ट 2)। निवेश में यह वृद्धि बढ़ती घरेलू बचतों द्वारा वित्त पोषित की गई जिसके साथ उत्पादकता में वृद्धि भी शामिल थी, जो प्रौद्योगिकी संगठन, वित्तीय मध्यस्थता, तथा बाह्य और घरेलू प्रतियोगिता में सुधार के कारण संभव हुई थी। इस अवधि में चालू खाता घाटा (सीएडी) जीडीपी का औसतन 0.3 प्रतिशत ही था जिसका अर्थ यह हुआ कि विदेशी बचतों का घरेलू निवेश में योगदान, अपेक्षाकृत काफी था, परंतु विदेशी प्रत्यक्ष निवेश (एफडीआई) के द्वारा जो विदेशी बचतें, जिस सीमा तक भारत में आई उसने समूचे निवेश की उत्पादकता को बढ़ा दिया और इसकी परिणति उच्चतर निर्यातों में हुई।

16. तत्काल संकट बाद की अवधि में चाहे निवेश धीमा पड़ा हो मगर निजी खपत माँग, जो जीडीपी का लगभग 57 प्रतिशत बनती है, जो ग्रामीण आय के रूप में 'हेल्ड-अप' होती है, वह संकट चालित प्रेरकों तथा सरकार के विस्तारित सेफ्टी नेट कार्यक्रमों की वजह से मजबूती से बढ़ी। इससे वृद्धि तो बढ़ी मगर साथ ही पूर्ति के मुकाबले माँग बढ़ने से मुद्रास्फीति भी बढ़ने लगी।

17. तो, गत दो वर्षों में वृद्धि में गिरावट का क्या स्पष्टीकरण है? इसका उत्तर है चारों ओर माँग धीमा होना। प्राइवेट निवेश भी तेज़ी से घटा, जो अंशतः तो, वैश्विक धीमेपन को परिलक्षित करता है मगर अधिकांशतः जिसके घरेलू कारण थे। कड़े होते इन्फ्रास्ट्रक्चर्स प्रतिबंधों और बढ़ती इनपुट कीमतों, जो उच्च खाद्य और ईंधन मुद्रास्फीति के कारण पैदा हुई थी, की वजह से कारोबारी लाभप्रदता कम हुई। बढ़ते राजकोषीय घाटे, सुधारों के प्रति हिचकिचाहट, तथा गवर्नेंस संबंधी चिंताओं से, कारोबारी भरोसा कम हुआ है और इन सबने मिलकर निवेश पर प्रतिफल के संबंध में निवेशकों की प्रत्याशाओं को आघात पहुँचाया है।

18. निजी निवेश में गिरावट के सर्वोच्च स्थान पर थी - निजी खपत माँग, जो कि संकट से शीघ्र रिकवरी के लिए एक बचाव थी वह भी हाल के वर्षों में धीमी पड़ने लगी जिसने वृद्धि के धीमेपन को और भी तेज़ कर दिया (चार्ट 3)। अनुमान है कि चालू वर्ष के दौरान यह धीमी हो कर 4.1 प्रतिशत हो गई है जो कि गत दो वर्षों के 8.3 प्रतिशत के औसत की तुलना में आधी से भी कम है।

मुद्रास्फीति

19. जैसे भारत विश्व संकट से अन्य देशों की तुलना में पहले उबरा वैसे ही अन्यों की तुलना में मुद्रास्फीति ने हमें पहले ग्रस लिया। थोक मूल्य सूचकांक (डब्ल्यू पीआइ) के रूप में मापी जाने वाली मुद्रास्फीति 2009 में कुछ महीनों के

चार्ट 2 : घरेलू बचत और निवेश (जीडीपी का %)

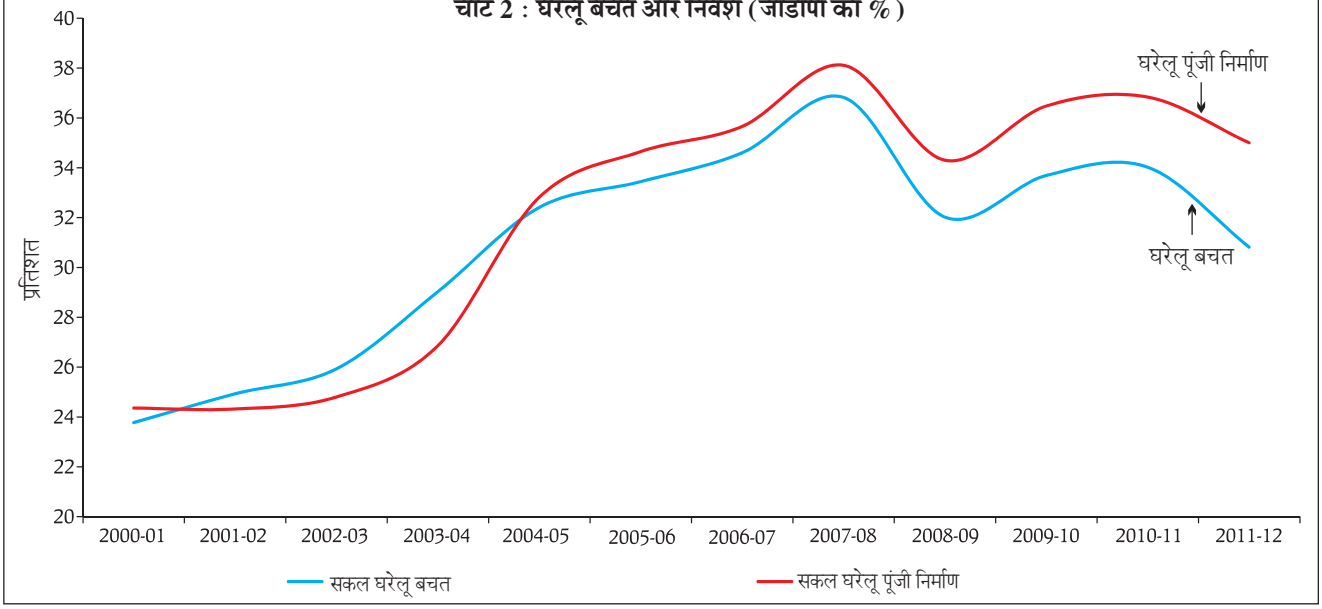

चार्ट 3 : निजी खपत और निवेश में वार्षिक वृद्धि

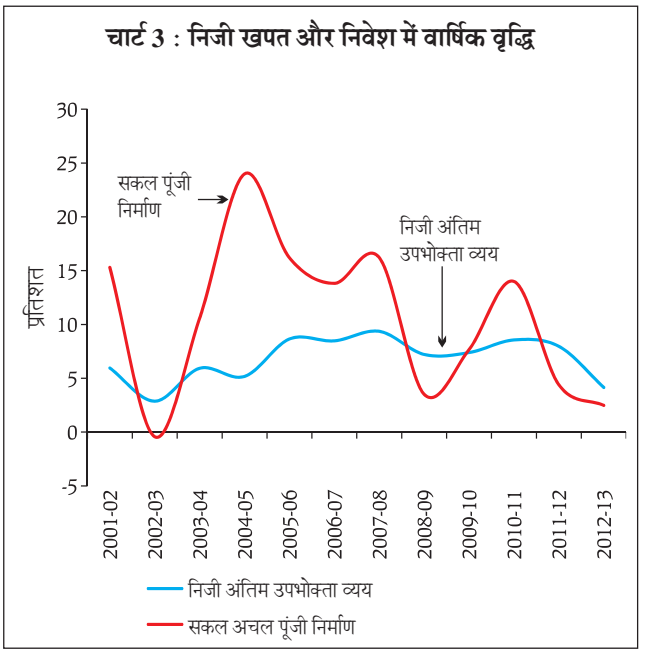

चार्ट 4 : वर्ष-दर-वर्ष मुद्रास्फीति दरें

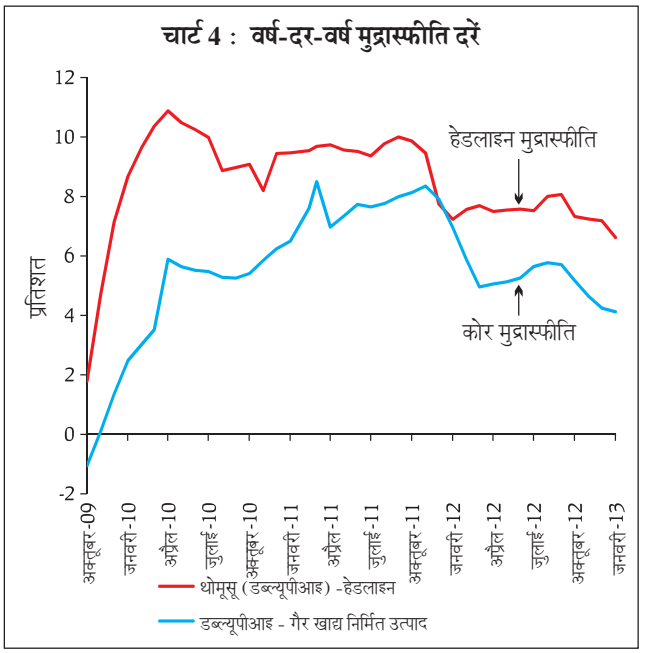

लिए अवश्य कम हुई मगर उसके बाद तेज़ी से ऊपर चढ़ने लगी और अप्रैल 2010 में यह बढ़कर 10.9 प्रतिशत हो गई। औसत डब्ल्यूपीआइ मुद्रास्फीति, राजकोषीय वर्ष 2010-11 में 9.6 प्रतिशत थी 2011-12 में 8.9 प्रतिशत हुई, और 2012-13 के पहले 10 माह में 7.5 प्रतिशत थी (चार्ट 4)। अतः कहानी यह है कि 8.7 प्रतिशत पर गत तीन वर्षों में औसत मुद्रास्फीति दर पिछले दशक (2000-10) के दौरान की 5.4 प्रतिशत की औसत मुद्रास्फीति से ऊँची है।

मुद्रास्फीति कौन पैदा कर रहा है?

20. आपूर्ति तथा मांग, दोनों पक्षों ने, मुद्रास्फीति दबाव बनाने में योगदान दिया है।

21. आपूर्ति की ओर से एक प्रमुख चालक रहा है खाद्य मुद्रास्फीति, जिसके संरचनात्मक तथा चक्रिक, दोनों प्रकार के घटक हैं। संरचनात्मक घटक, बढ़ती आमदनी के कारण पैदा हो रहे हैं, खासकर देहाती इलाकों में जहाँ लोगों की खूराक में बदलाव आया है और वे अब मोटे अनाज की बजाय प्रोटीन खाद्य खाने लगे हैं। कुछ महीनों को छोड़कर गत तीन वर्षों के अधिकांश हिस्से में, प्रोटीन-खाद्य-पदार्थों के मूल्यों में मुद्रास्फीति दो अंकों में रही (चार्ट 5)। खाद्य मुद्रास्फीति का चक्रिक घटक, सब्ज़ियों जैसे खाद्य पदार्थों की कीमतों में चढ़ाव से पैदा होता है जो मानसून से जुड़ा है। अर्थव्यवस्था की अकाल-प्रूफिंग की सब बातों के होते हुए भी समय पर मानसून का आना और उसका स्थानिक और कालिक वितरण अभी भी भारत के मुद्रास्फीति आउटलुक को प्रभावित करता है।

22. वर्तमान मुद्रास्फीति को प्रभावित करने वाला दूसरा महत्त्वपूर्ण कारक है - वैश्विक पण्य कीमतें, ख़ासकर कच्चे तेल की कीमतें। भारत अपने तेल की मांग का 80 प्रतिशत आयात करता है। अतः तेल की वैश्विक कीमतें, मुद्रास्फीति आउटलुक को निर्धारित करने वाला एक महत्त्वपूर्ण परिवर्तनीय कारक है। अक्तूबर 2011 से होते आ रहे रुपये के मूल्यह्रास

चार्ट 5 : प्रोटीन खाद्य मुद्रास्फीति (वर्ष-दर-वर्ष)

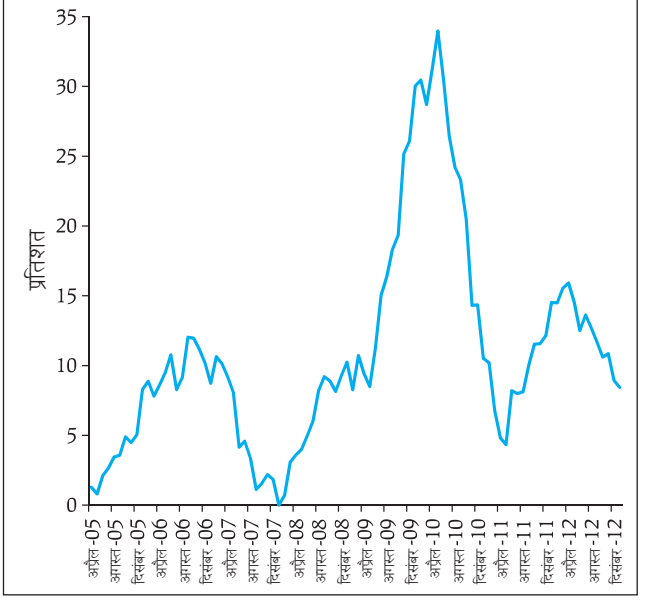

ने तेल की कीमतों के मुद्रास्फीति कारक प्रभाव को और भी बढ़ा दिया है।

23. यदि घरेलू पेट्रोलियम क्षेत्र एक मुक्त बाज़ार होता और यदि वैश्विक कीमतें घरेलू मूल्यों के जरिए 'पास-ऑन' होतीं, तो बढ़ती कीमतों की प्रतिक्रिया स्वरूप, मांग निस्संदेह रूप से घट जाती। मगर इस प्रकार के मांग समायोजन को, पेट्रोलियम पदार्थों के प्रशासित (सब्सीडाइज़्ड) मूल्य साम्राज्य ने अवरोधित कर दिया।

24. तथापि सब्सिडाइज़ेशन ने हमें मुद्रास्फीतिकारी दबावों से नहीं बचाया - सब्सिडीज़ की लागतों ने राजकोषीय घाटे को बढ़ाया जिसने मुद्रास्फीति को और आंच दी। इसलिए सब्सिडाइज़ेशन के जरिये हमें मुद्रास्फीति की जो थोड़ी बहुत नरमाई मिली थी उसे व्यापक राजकोषीय घाटे ने ऑफसेट कर दिया।

25. भारत में, वित्तपोषित सब्सिडियों, सरकारी अधिशेष से वित्तपोषित नहीं बल्कि सरकारी उधार से वित्तपोषित सब्सिडियों, के वृहद् आर्थिक और कल्याण आयामों के संबंध में एक बहस जारी है। डी-सब्सिडाइज़ेशन के विरूद्ध एक तर्क यह है कि यह मुद्रास्फीतिकारी होगी। निश्चित ही अल्पावधिमें तो यह स्फीतिकारी होगी परन्तु मूल्य दबाव, मध्यावधि में उसे बराबर कर देंगे। इसके अलावा, मुद्रास्फीति के प्रभाव के बारे में भी ''अतिशयोक्तिपूर्ण'' नहीं कहा जाना चाहिए। जिस सीमा तक निम्नतर सब्सिडियाँ, एक निम्नतर राजकोषीय घाटे में परिणत होती हैं, वहाँ अल्पावधि में भी कुछ अ-मुद्रास्फीतिकारी प्रभाव अवश्य होगा। अंत में, सब्सिडियों में कमी से मूल्यों में डिस्टॉर्शन्ज़ दूर होंगे, दक्षता में सुधार होगा तथा इससे निवेश का बेहतर वातावरण बनेगा।

26. मुद्रास्फीति को प्रज्ज्वलित करने वाला तीसरा प्रमुख कारक है - मज़दूरी (वेतन) दबाव। गत पांच वर्षों में नॉमिनल ग्रामीण मज़दूरी बढ़कर दो अंकों में आ गई है और असल में यह इतनी तेज़ी से बढ़ी है कि उच्च खुदरा मुद्रास्फीति के बावजूद, रीयल मज़दूरी वृद्धि, गत तीन वर्षों में, दो अंकों में आ चुकी है (तालिका 1)। सरकार के सामाजिक सुरक्षा - नेट कार्यक्रमों ने ''मज़दूरी कीमत-स्पाइरल'' में योगदान भी दिया और इसे स्थायी बनाने में भी सहायता की। लगभग 1500 अमरीकी डॉलर प्रति व्यक्ति आय वाली अर्थव्यवस्था में, आय में हुई कोई भी वृद्धि, शीघ्र ही उपभोक्ता मांग में वृद्धि के रूप में दिखने लग जाती है और ठीक यही हमने भारत में देखा। अभी हाल तक उत्पादक, उच्चतर इनपुट कीमतों को, अपने मार्जिन को छोड़े बिना, उच्चतर आउटपुट कीमतों के रूप में 'पास-ऑन' करने में समर्थ थे।

वृद्धि मुद्रास्फीति गतिशीलता

27. संकट-पूर्व और संकट-पश्चात् की भारत की ''वृद्धि-मुद्रास्फीति गतिशीलता'', विषम तस्वीर पेश करती है। संकट-पूर्व की तीन वर्ष की अवधि में, अर्थव्यवस्था, औसतन, 9.5 प्रतिशत की दर से बढ़ी और उसका साथ दिया प्रति वर्ष 15 प्रतिशत से अधिक के अचल (फिक्स्ड) निवेश की वृद्धि ने। इससे, बढ़ती मांग को मैच करने के लिए उत्पादन क्षमता बढ़ी और इसने कोर मुद्रास्फीति को अंकुश में रखा। संकट के बाद कहानी उलट गई। निवेश, संकट-पूर्व की दर से आधा रह गया, जबकि अभी पिछले साल तक, उपभोक्ता मांग, संकट-पूर्व के स्तर पर ही बनी रही जिसका अंशतः कारण तो सरकार के ''एन्टाइटलमेन्ट'' तथा कल्याण कार्यक्रम थे, 2009-11 के दौरान एक सकारात्मक आउटपुट गैप का खुलना था, तथा कोर मुद्रास्फीति की स्टोकिंग थी।

वृद्धि-मुद्रास्फीति गतिशीलता के बारे में दो प्रश्न

28. हाल के वर्षों की वृद्धि मुद्रास्फीति गतिशीलता, जिसका संक्षेप में मैंने ऊपर उल्लेख किया है दो दिलचस्प और संबंधित नीतिगत प्रश्न खड़े करती है, पहला प्रश्न - भारत की संभावित वृद्धि दर के बारे में है और दूसरा सीधी संतुलित आउटपुट वृद्धि के होते हुए भी मुद्रास्फीति, इतने ऊँचे स्तर पर क्यों बनी हुई है। अब मैं संक्षेप में इनके बारे में बताऊँगा।

तालिका 1 : ग्रामीण मज़दूरी में वृद्धि

वर्ष	नॉमिनल मज़दूरी वृद्धि*	औसत सीपीआइ (आरएल) मुद्रास्फीति	रीयल मज़दूरी वृद्धि
	(प्रतिशत)		
2007-08	8.9	7.2	1.5
2008-09	15.9	10.2	5.1
2009-10	18.0	13.8	3.8
2010-11	20.0	10.0	8.9
2011-12	19.9	8.3	10.6
2012-13 (अप्रैल-नवंबर)	18.1	9.4	8.0

* ग्रामीण अकुशल मज़दूर (पुरुष) के लिए दैनिक मज़दूरी दर
सीपीआइ (आरएल) : देहाती श्रमिक के लिए उपभोक्ता मूल्य सूचकांक

भारत की संभावित वृद्धि दर क्या है ?

29. विश्व मुद्रा कोष (आई एम एफ) तथा अंतर्राष्ट्रीय निपटान बैंक में किए गए अनुसंधान से यह काफी साक्ष्य मिलता है कि संभावित वृद्धि दरें उन्नत तथा उभरती दोनों प्रकार की अर्थव्यवस्थाओं में काफी गिरी हैं। अन्य ईएमई के मुकाबले वैश्विक अर्थव्यवस्था से कम एकीकृत होने के बावजूद भारत में भी संभावित वृद्धि दरों में काफी गिरावट आई है। रिज़र्व बैंक के आकलन बताते हैं कि संकट से पूर्व संभावित वृद्धि दर 8.0 - 8.5 प्रतिशत की रेंज में थी, संकट के बाद कई कारणों से इस अनुमान को 7.0 प्रतिशत तक नीचे लाया गया; ये कारण थे - पूँजी निर्माण की गति में कमी, आपूर्ति संबधी रुकावटें खासकर इन्फ्रास्ट्रक्चर संबंधी सुधारों की धीमी गति के कारण, फैक्टर उत्पादकता पर दबाव तथा उच्च राजकोषीय घाटा।

30. कुछ विशेषज्ञों का मत है कि संभावित वृद्धि दर रिज़र्व बैंक के संकटोत्तर 7 प्रतिशत के अनुमान से भी नीचे गिरी होगी। तर्क यह है कि गत वर्ष वृद्धि दर 7 प्रतिशत से भी नीचे आ जाने और इस वर्ष इसके और भी नीचे आने की वजह से, हमें मुद्रा स्फीति तथा चालू खाते घाटे को नरम होते देखना चाहिए था। दूसरी ओर, मुद्रास्फीति ऊँचे स्तर पर बनी हुई है और चालू खाता घाटा अब तक का सबसे अधिक होने की संभावना है जिसका यह अर्थ निकलता है कि अर्थव्यवस्था अपनी क्षमता से भी अधिक बढ़ रही है और संभावित वृद्धि 7 प्रतिशत से भी नीचे हो सकती है।

भारत की ''वृद्धि-मुद्रास्फीति गतिशीलता'' विपरीत क्यों है?

31. दूसरा और संबंधित प्रश्न यह है कि भारत की बृहद् आर्थिक गतिशीलताएँ प्रतिकूल क्यों हैं? विशेषकर गत दो वर्षों में हमारी ही तरह की ईएमई ने भी वृद्धि में गिरावट का अनुभव किया है मगर मानक सिद्धांत के अनुरूप इन में से कइयों ने अपनी मुद्रास्फीति की दरों में मोडरेशन भी देखा है मगर भारत में वृद्धि में गिरावट के अनुरूप मुद्रास्फीति नीचे नहीं आई है। हमारी बृहद् आर्थिक स्थिति के अनोखेपन को स्पष्ट करने के लिए कई विशिष्ट कारण बताए गए हैं; आपूर्ति संबंधी रुकावटें, खासकर इन्फ्रास्ट्रक्चर में, सेक्टोरल असंतुलन, मजदूरी में वृद्धि मगर उत्पादकता में तदनुरूप वृद्धि नहीं, उच्चतर राजकोषीय घाटा तथा हमारे समरूपों की तुलना में हमारी एक्सचेंज दर में अधिक मूल्यह्रास।

मुद्रास्फीति रोकने के लिए रिज़र्व बैंक के कदम

32. मुद्रास्फीति पर नियंत्रण पाने के लिए रिज़र्व बैंक ने संकट की अवधि के ''निभावकारी मौद्रिक स्टांस (स्वरूप)'' को शीघ्रातिशीघ्र उलटा कर दिया। हमने नीतिगत ब्याजदर (रेपो रेट) को 13 बार बढ़ाया। संचयी रूप से 375 आधार बिंदु (बीपीएस) - 4.75 प्रतिशत से 8.5 प्रतिशत। साथ ही हमने बैंकों की प्रारक्षित निधि रखने संबंधी आवश्यकताओं को बढ़ाया और नकद प्रारक्षित अनुपात (सीआरआर) को 100 बीपीएस बढ़ा कर 5 प्रतिशत से 6 प्रतिशत कर दिया। मौद्रिक नीति, जैसे कि ज्ञात है विलंब से कार्य करती है और इस कड़ी मौद्रिक नीति के परिणामस्वरूप, ''थोक मूल्य सूचकांक मुद्रास्फीति'', जो अप्रैल 2010 में 10.9 प्रतिशत के शीर्ष पर खड़ी थी वह जनवरी 2013 में नीचे आकर 6.6 प्रतिशत पर आ गई।

33. वृद्धि में गिरावट और मुद्रास्फीति में कमी आने पर रिज़र्व बैंक ने जनवरी 2012 से शुरु करके मौद्रिक नीति स्वरूप को नरम कर दिया और रेपो रेट को 75 बीपीएस तथा सीआरआर को 200 बीपीएस कम कर दिया।

रिज़र्व बैंक की मौद्रिक नीति के स्वरूप के खिलाफ आलोचना

34. रिज़र्व बैंक की, इसके मुद्रास्फीति के विरुद्ध अख्तियार किए गए स्वरूप की, काफी आलोचना हुई है। अब मैं इस आलोचना के कुछ मुख्य तत्त्वों के बारे में बताऊँगा, उन दुविधाओं को प्रकट करने के लिए जिनका कि ''वृद्धि मुद्रास्फीति ट्रेड ऑफ'' के प्रबंधन में हमें सामना करना पड़ता है।

मौद्रिक नीति ने केवल विकास को दबाया है, मगर मुद्रास्फीति को निस्तेज नहीं किया है

35. अब तक सर्वाधिक आम आलोचना यह रही है कि कड़ी मौद्रिक नीति ने वृद्धि का तो गला घोंटा, है मगर मुद्रास्फीति को निस्तेज नहीं किया है। इस आलोचना के संबंध में मेरी प्रतिक्रिया इस प्रकार है। प्रथम तो मुद्रास्फीति अपने शीर्ष से लगभग 4 प्रतिशतता बिंदु विलग हुई है। निस्संदेह वृद्धि भी कम हुई है तथापि रिज़र्व बैंक का, मुद्रास्फीति की प्रतिस्फीति का रुख, इस सिद्धान्त वाक्य से प्रेरित है कि मुद्रास्फीति वृद्धि

की विरोधी है और केवल मूल्य स्थिरता की स्थिति में ही उपभोक्ता और निवेशक समझदारी से विकल्प चुन सकते हैं।

36. यहाँ यह भी ध्यान में रखा जाना जरूरी है कि मुद्रास्फीति को रोके रखने के लिए मुद्रा नीति, माँग पर अंकुश लगाती है जो कि परिणामतः वृद्धि को सीमित करती है। इस तर्क के अनुसार वृद्धि में कमी सख्त मौद्रिक नीति का अपरिहार्य परिणाम है परंतु यह बलिदान केवल अल्पावधि में है। मध्यावधि में कोई वृद्धि - मुद्रास्फीति ट्रेड ऑफ नहीं है। इस के विपरीत कम तथा स्थिर मुद्रास्फीति, निरंतर उच्च मध्यावधि वृद्धि देती है, और यही रिज़र्व बैंक का लक्ष्य है।

37. इस संदर्भ में यह भी उल्लेखनीय है कि वृद्धि और मुद्रास्फीति के बीच विषम संबंध है। मुद्रास्फीति के कम स्तरों और स्थिर मुद्रास्फीति प्रत्याशाओं पर वृद्धि और मुद्रास्फीति के बीच ट्रेड ऑफ (समझौताकारी समन्वयन) है। विकास के पहियों की ग्रीजिंग के लिए कुछ मुद्रास्फीति सहन की जा सकती है परंतु मुद्रास्फीति के कुछ प्रारंभिक स्तर के ऊपर यह संबंध उलट जाता है। पारंपरिक तालमेल गायब हो जाता है और उच्च मुद्रास्फीति असल में वृद्धि पर प्रतिकूल असर डालना शुरू कर देती है। विभिन्न विधियों का प्रयोग करके रिज़र्व बैंक ने जो आकलन किए हैं उनके अनुसार मुद्रास्फीति का प्रारंभिक (थ्रेशोल्ड) स्तर, 4 से 6 प्रतिशत के रेंज में होना चाहिए। 6 प्रतिशत से ऊपर की मुद्रास्फीति से मौद्रिक नीति के स्वरूप को कड़ा करना, तार्किक सिद्ध करता है। यही समझ रिज़र्व बैंक की मौद्रिक नीति के स्वरूप का आधार है।

आपूर्ति आघात से जनित मुद्रास्फीति को रोकने के लिए मौद्रिक नीति को सख्त बनाना अनुपयुक्त है

38. रिज़र्व बैंक की मुद्रास्फीति विरोधी मौद्रिक नीति की दूसरी, और संबंधित आलोचना, यह है कि भारत की हाल की मुद्रास्फीति खाद्य तथा ईंधन मदों में आपूर्ति आघातों के कारण पैदा हुई है और ऐसे मामले में कड़ी मौद्रिक नीति से मुद्रास्फीति को रोकने में कोई मदद नहीं मिलेगी। इसके परिणामस्वरूप केवल वृद्धि का परिहार्य बलिदान ही होगा।

39. इस आलोचना के मेरे पास कई जवाब हैं। पहला तो यह कि मुद्रास्फीति केवल आपूर्ति आघातों से नहीं बढ़ी बल्कि माँग दबावों से भी बढ़ी है। जैसा कि 2009-10 तथा 2010-11 के संकटोत्तर काल के तत्काल के वर्षों में आउटपुट का संभावित वृद्धि से तेज़ बढ़ना, चालू खाता घाटा अधिक होना तथा बढ़ना, तथा उपभोग माँग में तेज वृद्धि से प्रमाणित हुआ है।

40. निस्संदेह माँग दबावों के अतिरिक्त आपूर्ति आघात भी थे जो कि मुद्रास्फीति दबावों को और तेज़ कर रहे थे। आपूर्ति आघातों के जवाब में मौद्रिक नीति प्रतिक्रिया जानबूझकर की गई एक संतुलन कार्रवाई है क्योंकि ''न हुई वृद्धि के संदर्भ में'' त्रुटियाँ काफी महंगी साबित हो सकती हैं। यदि जजमैंट यह है कि आपूर्ति आघात अस्थायी हैं (जैसे कि सब्ज़ियों के मूल्यों में चक्रिक वृद्धि) तो अधिमान नीति प्रकिया यह होगी कि इसका जवाब मौद्रिक कड़ाई द्वारा न दिया जाए। यदि इसकी दूसरी ओर, जजमैंट यह है कि आपूर्ति आघात संरचनात्मक प्रकृति के हैं, और बने रहेंगे, तो, मौद्रिक नीति को प्रतिक्रया देनी पड़ेगी क्योंकि बनी रहने वाली मुद्रास्फीति, चाहे इसका चालक कोई भी क्यों न हो, मुद्रास्फीति प्रत्याशाओं को और भी तेज़ करेगी। अव्यवस्थित मुद्रास्फीति प्रत्याशाओं के जरिए मुद्रास्फीति का सामान्यीकरण रोकने के लिए मौद्रिक नीति अपरिहार्य रूप से रक्षा की पहली पंक्ति है। रिज़र्व बैंक की नीतिगत प्रतिक्रिया उपर्युक्त अवधारणा द्वारा ही निदेशित है।

41. संक्षेप में, वृद्धि मुद्रास्फीति गतिशीलता से आई चुनौती से निकला अंदाज़ा इस प्रकार है : आज का निवेश कल की उत्पादन क्षमता है। भारत में न केवल निवेश की गिरावट को उलटने की जरूरत है बल्कि इसे काफी बढ़ाने की भी ज़रूरत है ताकि उत्पादन बढ़े और यह बढ़ती उपभोग माँग से मिलान खा सके। निवेश में वृद्धि, निर्यातों के लिए उत्पादन बढ़ाने के लिए भी आवश्यक है ताकि घर में नौकरियाँ निर्मित हो सकें। इसके लिए पब्लिक गुड्स प्रदान करके तथा प्राइवेट निवेश के लिए अनुकूल वातावरण निर्मित करके सरकार की ओर से आपूर्ति रिस्पोंस की ज़रूरत होगी। इस बीच रिज़र्व बैंक को सुनिश्चित करना होगा कि मुद्रास्फीति प्रारंभिक (थ्रैशोल्ड) स्तर पर लाई जाए तथा वहीं बना कर रखी जाए।

दूसरी चुनौती : बाह्य क्षेत्र की भेद्यता को कम करना

42. गत दो वर्षों में भारत का भुगतान संतुलन काफी दबाव में आया है जैसा कि स्पष्ट रूप से काफी बड़े और निरंतर बढ़ते चालू खाते घाटे (सीएडी) से स्पष्ट होता है। गत वर्ष (2011-12) सीएडी, जीडीपी की 4.2 प्रतिशत थी जो ऐतिहासिक रूप से सबसे अधिक थी। चालू वर्ष में सीएडी के और भी अधिक बढ़ जाने की आशंका है।

43. कइयों को याद होगा कि 1991 में भी भारत में भुगतान संतुलन का संकट आया था जिसके कारण काफी व्यापक संरचनात्मक सुधार करने पड़े थे जिससे अर्थव्यवस्था को 'बाज़ार अभिमुखीकरण' मिला। वैश्विक अर्थव्यवस्था के साथ भारत के बढ़ते एकीकरण के बावजूद बाह्य क्षेत्र उसके बाद भी 15 वर्षों तक मजबूत बना रहा। भुगतान संतुलन के जो दबाव वर्तमान में हैं, जहाँ कि सीएडी 1991 के भुगतान संतुलन संकट के समय शीर्ष की स्थिति (जीडीपी की 3 प्रतिशत) से भी अधिक है, उससे ये आशंकाएँ पैदा हो रही हैं कि क्या हम में, दबावों का सामना करने की क्षमता है और क्या हम भुगतान संतुलन को एक स्थायी राह पर पुनर्स्थापित कर सकते हैं।

44. सीएडी में वृद्धि स्पष्टतः निर्यात के मुकाबले तेजी से आयात बढ़ने का ही परिणाम है (तालिका 2)।

45. आयातों में वृद्धि मुख्यतः तेल तथा स्वर्ण आयातों के कारण है। इन दोनों ने भुगतान संतुलन पर कितना दबाव डाला है इसके लिए निम्नलिखित को समझना होगा। यदि गतवर्ष सीएडी में से तेल और स्वर्ण आयातों को निकाल दें तो यह जीडीपी का 3.8 प्रतिशत सरप्लस होता है। जबकि यह जीडीपी का 4.2 प्रतिशत घाटा है। सोने का आयात इसलिए बढ़ा क्योंकि मुद्रास्फीति के कारण अन्य आस्तियों पर रीयल रिटर्न कम हो गयी। तेल आयातों के मूल्यों में लोचनीयता न होने का कारण है कि लगभग 60 प्रतिशत पैट्रोलियम उत्पाद एक प्रशासित मूल्य व्यवस्था से होकर गुज़रते हैं। इस सीमा तक तेल की माँग, कीमतों में वृद्धि के साथ समायोजन नहीं करती। दूसरी ओर निर्यातों की मदद नहीं की गई चाहे वास्तविक विनिमय दर घटी भी हों। जिससे यह तथ्य उभरता है कि धीमी वैश्विक अर्थव्यवस्था में निर्यात 'आय संवेदी' होते हैं न कि कीमत संवेदी (अर्थात् वैश्विक माँग)।

46. भुगतान संतुलन में चालू और पूँजी खातों को परिलक्षित करते हुए विनिमय दर नॉमिनल तथा रीयल दोनों संदर्भों में गिरी (तालिका 3)।

सीएडी के बारे में तीन चिंताएँ

47. सीएडी के बारे में मुख्यतः तीन चिंताएँ हैं: (i) सीएडी की मात्रा (ii) सीएडी की गुणवत्ता तथा (iii) सीएडी का वित्तपोषण। अब मैं इन में से प्रत्येक की चर्चा संक्षेप में करूँगा।

तालिका 2 : भुगतान संतुलन

	2010-11	2011-12
	(बिलियन अमरीकी डॉलर)	
निर्यात	250.5	309.8
(वर्ष-दर-वर्ष वृद्धि)	*37.4*	*23.7*
आयात	381.1	499.5
(वर्ष-दर-वर्ष वृद्धि)	*26.8*	*31.1*
जिसमें से		
- तेल	105.1	155.6
(वर्ष-दर-वर्ष वृद्धि)	*20.6*	*48.1*
- स्वर्ण	40.5	56.5
(वर्ष-दर-वर्ष वृद्धि)	*41.4*	*39.5*
व्यापार संतुलन	(-) 130.5	(-) 189.8
चालू खाता घाटा	(-) 45.9	(-) 78.2
पूंजी प्रवाह	62.0	67.8
प्रारक्षित चार्ज	(-) 13.1	12.8
जीडीपी के % के रूप में		
निर्यात	14.6	16.5
आयात	22.3	26.7
व्यापार संतुलन	(-) 7.6	(-) 10.1
सीएडी	(-) 2.7	(-) 4.2
स्वर्ण को निकालकर (निवल)	(-) 0.7	(-) 1.5
स्वर्ण तथा तेल को छोड़कर (निवल)	3.0	3.8
पूंजी प्रवाह	3.6	3.6

सीएडी की मात्रा

48. रिज़र्व बैंक के आकलन दर्शाते हैं कि, भारत के लिए धारणीय सीएडी, जीडीपी का 2.5 प्रतिशत है। धारणीय स्तर से अधिक की सीएडी, वर्ष-दर-वर्ष, एक स्पष्ट वृहद् आर्थिक जोखिम है क्योंकि यह हमारी बाह्य भुगतान जिम्मेदारियों को पूरा कर सकने की हमारी समर्थता पर सवाल उठाती है तथा संभावित ऋण दाताओं और निवेशकों के भरोसे का क्षरण करती है।

49. एक अतिरिक्त चिंता यह है कि धीमी वृद्धि होते हुए भी हमारा चालू खाता घाटा बहुत बढ़ा है। यह एक उलझनवाली बात है क्योंकि तर्क कहता है कि आयात माँग

तालिका 3 : विनिमय दर गतिशीलता

	नोमिनल परिवर्तन	रीयल परिवर्तन
	(प्रतिशतता)	
2011-12 (मार्च 31, 2011 पर मार्च 31, 2012)	(-) 12.7	(-) 17.4
2012-13 (मार्च 31, 2012 पर फरवरी 28, 2013)	(-) 4.9	(-) 2.8

में कमी के कारण धीमी अर्थव्यवस्था में सीएडी में सुधार होना चाहिए। क्षेत्रपारसाक्ष्य वस्तुतः इस परिकल्पना का समर्थन करते हैं, तथापि भारत में इस प्रकार का समायोजन नहीं हुआ है क्योंकि (i) तेल तथा स्वर्ण आयात आय, परिवर्तनों के प्रति अपेक्षाकृत आलोचनीय है (ii) गैर तेल आयात में घरेलू आपूर्ति अभी भी आयातों से प्रतियोगिता करने में असमर्थ है (iii) आपूर्ति संबंधी रुकावटें तथा कम बाहरी माँग, निर्यातों में बाधा डाल रही हैं।

सीएडी की गुणवत्ता

50. सीएडी की गुणवत्ता के संबंध में चिंता, आयातों की रचना के कारण है। यदि हम केपीटल गुड्स आयात कर रहे होते तो हम उच्चतर सीएडी को प्रोत्साहित कर रहे होते क्योंक पूँजीगत वस्तुओं में निवेश का आशय है कल के लिए उत्पादन क्षमता निर्मित करना। दूसरी ओर स्वर्ण का आयात, जो कि अधिकतर मुद्रास्फीति के समक्ष एक सुरक्षा है एक प्रकार का भार ही है, खासकर उस समय, जबकि सीएडी धारणीय स्तर से परे है।

सीएडी का वित्त पोषण

51. चाहे सीएडी ऊँची है फिर भी हम कई ''पुश और पुल'' तत्त्वों के मिश्रण की वजह से हम इसका वित्तपोषण कर पा रहे हैं। 'पुश-साइड' में वैश्विक प्रणाली में अतिरिक्त चल निधि राशि है जो कि उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के केंद्रीय बैंकों द्वारा प्रदान किए गए असाधारण मौद्रिक स्टीम्युलस के परिणामस्वरूप है। 'पुल-साइड' में, पूँजी प्रवाह आकर्षित करने के लिए हमारे द्वारा किए गए उपाय हैं, जैसे एफडीआई का उदारीकरण, कार्पोरेट तथा सरकारी कर्ज़ में विदेशी निवेश की सीमाओं को बढ़ाना तथा कार्पोरेट्स द्वारा बाह्य वाणिज्यिक उधारों पर प्रतिबंधों को नरम करना।

52. इतने विशाल सीएडी के वित्तपोषण की कोशिश में हम अर्थव्यवस्था को पूँजी प्रवाहों के अकस्मात रुकने और निकास के जोखिम के समक्ष अनावृत्त कर रहे हैं। यह उस सीमा तक है जिस तक अल्पावधि लाभों की ओर पूँजी प्रवाहित होती है। यदि पूँजी निकास का जोखिम सच हो जाता है तो विनिमय दर में भारी उतार-चढ़ाव आएँगे जिससे वृहद् आर्थिक उथल-पुथल पर 'नॉक-ऑन' प्रभाव होगा।

एक बड़ी सीएडी के परिप्रेक्ष्य में मौद्रिक ईज़िंग

53. जैसा कि मैंने पहले इंगित किया है जहाँ कई कारणों से बाह्य क्षेत्र भेद्यता चिंता का एक विषय है वहीं यह मौद्रिक नीति स्वरूप की केलिब्रेटिंग के लिए एक विशेष चुनौती भी प्रस्तुत करती है।

54. इस वर्ष जनवरी के अंत में हमारी तिमाही नीति समीक्षा में, रिज़र्व बैंक ने, जैसा कि मैंने पहले उल्लेख किया है, वृद्धि मुद्रास्फीति गतिशीलता के प्रतिक्रियास्वरूप, बेन्चमार्क रेपो रेट को 25 बीपीएस कम किया। कई विश्लेषकों और कमेन्टेटर्ज ने ऐसे समय, जबकि सीएडी बढ़ रही हो, 'मौद्रिक ईज़िंग' करने की समझदारी और तर्क पर प्रश्न चिह्न उठाए हैं। इस तर्क के पीछे दो तत्त्व हैं : (i) ब्याज दर में कटौती, सकल मांग को बढ़ाती है, और इस प्रकार, आयात की मांग को और पहले से ही बढ़ी हुई सीएडी को, और बढ़ाएगी और (ii) ब्याज दर कटौती, भारत तथा उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के बीच 'ब्याज-विभेदक' को कम करेगी, जो पूंजी के स्रोत हैं और संभवतः 'पूंजी-एग्ज़िट' को लीड करेगी।

55. अब मैं इन दोनों आलोचनाओं पर अपना उत्तर प्रस्तुत करता हूँ।

56. दर कटौती द्वारा प्रस्तुत प्रेरक (स्टिमुलस) के कारण सीएडी और बढ़ने का जोखिम, आशंका से कहीं कम है, जिसकी कई वजहें हैं। पहली, जब विकास धीमा है जैसा कि अब है, तो दर कटौती के आयात मांग में बदलने की संभावनाएं नहीं है। दूसरी, दर कटौती, मुद्रास्फीति नरम होने के जवाब में की गई थी। कम मुद्रास्फीति, हमारे निर्यातों की प्रतियोगितात्मकता में सुधार लाएगी। तीसरी दर कटौती, पण्य कीमतों, - विशेषकर तेल की कीमतों के नरम होने के चरण के दौरान की गई थी, जिससे कि सीएडी पर दबाव घटेगा। अंत में अनुभवजन्य साक्ष्य दिखलाता है कि भारत जैसी उभरती अर्थव्यवस्था में आयात मांग, बढ़ी आय के मुकाबले, कम ब्याज दर के कारण कम है। दूसरे शब्दों में, उधार लेकर आयात करने की सीमांत प्रवृत्ति कम है।

57. सीएडी के वित्तपोषण हेतु अपेक्षित पूंजी प्रवाहों के असर के बारे में जो अन्य आलोचना है, उसके संबंध में यह अवश्य ध्यान में रखा जाना चाहिए कि 'ब्याज दर विभेदक' कई 'पुश और पुल कारकों' में से केवल एक है, जो पूंजी प्रवाहों को प्रभावित करता है। इसके अतिरिक्त, कर्ज़ और इक्विटी

प्रवाहों ने पारंपरिक रूप से, दर कटौती के प्रति भिन्न-भिन्न रूप से प्रतिक्रिया दी है। जहां कर्ज़ प्रवाह, 'ब्याज दर विभेदक' के संकरे होने के प्रति अधिक संवेदनशील हो सकते हैं, वहीं, इक्विटी प्रवाह, असल में बढ़ सकते हैं क्योंकि वे इसमें कम मुद्रास्फीति और बेहतर निवेश वातावरण के संकेत देखते हैं। यही भारत का अनुभव रहा है, जो इस विश्लेषण के पीछे है, जिसे हम 'भारतीय अपवादवाद' कह सकते हैं।

58. बाह्य क्षेत्र भेद्यता के प्रबंधन के मसले पर मैं आपके साथ जो अंतिम विचार बांटना चाहता हूं वह यह है कि वे दिन बीत गए जब मौद्रिक नीति, केवल घरेलू वृहद् आर्थिक आधार पर कैलीब्रेट की जाती थी। जैसे-जैसे भारत, आनेवाले सालों में, विश्व के साथ एकीकृत होता जाएगा, इसे अपनी मौद्रिक नीति तय करने में, वैश्विक स्थिति के 'स्पिलओवर' को मजबूरन ध्यान में रखना ही पड़ेगा।

तीसरी चुनौती : राजकोषीय समेकन की राजनैतिक आर्थिकी का प्रबंधन

59. सरकार का विशाल राजकोषीय घाटा भारत की सबसे बड़ी वृहदार्थिक चुनौतियों में से एक है। आज यही मानने में समझदारी है कि यह 1980 की राजकोषीय अपव्ययिता ही थी जो बाह्य सेक्टर में भी बिखरती गई और जिसने 1991 के भुगतान संतुलन संकट को आंच दी। 2011-12 में केन्द्र और राज्य सरकारों का संयुक्त राजकोषीय घाटा मिलकर 8.1 प्रतिशत था जो कि 1990-91 के भुगतान संतुलन संकट वर्ष के, 9.1 प्रतिशत के आंकड़े के लगभग बराबर ही है (चार्ट 6)। निश्चय ही, इस दुहरे घाटे की समस्या - उच्च सीएडी के साथ-साथ बड़े और निरन्तर जारी राजकोषीय घाटे की समस्या के प्रतिकूल वृहद् आर्थिक परिणामों के बारे में चिंता होना स्वाभाविक है।

60. गत छः माह में सीएडी तथा राजकोषीय घाटे को ठीक करने के लिए कुछ स्वागत योग्य कदम उठाए गए हैं, चाहे देरी से ही सही। स्वर्ण के आयात को सीमित करने के लिए सरकार ने स्वर्ण आयात पर कस्टम शुल्क को बढ़ाया है। इससे भी उल्लेखनीय यह है कि हाल के बजट ने केळकर समिति द्वारा सुझाए गए रोड मैप के अनुरूप, अगले वर्ष के राजकोषीय घाटे को सीमित करके, बड़ी मज़बूरी से राजकोषीय ज़िम्मेदारी को स्वयं पर लिया है।

61. संकटपूर्व अवधि में, भारत का राजकोषीय समेकन अधिकतर पटरी पर था जो कि राजकोषीय उत्तरदायित्व और बजट प्रबन्धन (एफआरबीएम) अधिनियम, 2003 के अन्तर्गत अपनाए गए लक्ष्यों के अनुरूप था। तथापि इस संकट से जनित राजकोषीय स्टीम्युलस से इस समेकन में रुकावट आई। इसके बाद सरकार ने राजकोषीय समेकन को वापस पटरी पर लाने के लिए संशोधित रोड मैप अपनाया और 2012-13 में लक्ष्य का अनुपालन किया। इन सब के होते हुए भी केंद्र और राज्य सरकारों का संयुक्त राजकोषीय नामे, जो 2012-13 के दौरान जीडीपी के 7.2 प्रतिशत पर

चार्ट 6 : सकल राजकोषीय घाटा - तीन सुनिश्चित चरण

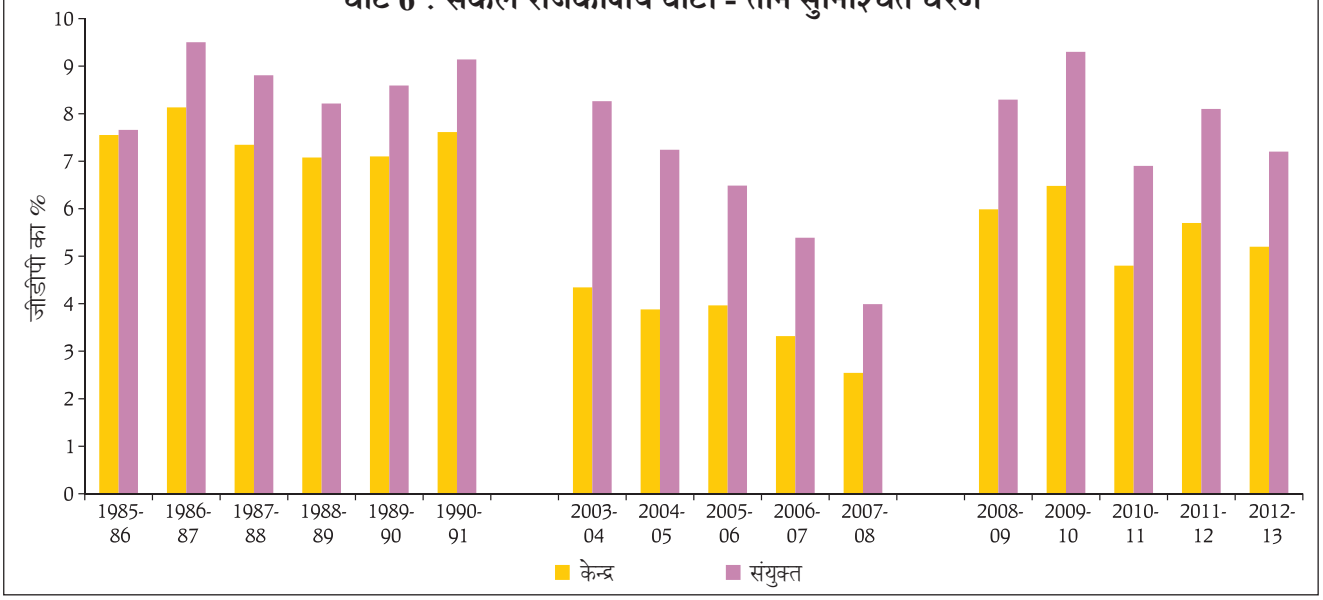

बजटित है, अभी भी ऊँचा है। राजनैतिक आर्थिकी दबावों के बावजूद एक संभवनीय तथा पारदर्शी रोड मैप के साथ विश्वसनीय राजकोषीय समायोजन, वृद्धि और वृहद् आर्थिक स्थिरता के लिए अनिवार्य है।

राजकोषीय घाटा बुरा क्यों होता है ?

62. राजकोषीय घाटा कई कारणों से बुरा होता है। बड़ा और निरंतर राजकोषीय घाटा सरकार की कर्ज़ धारणीयता के लिए खतरा होता है। ब्याज का बढ़ता बोझ ऐच्छिक व्यय के लिए उपलब्ध संसाधनों को खा जाता है। यह कर्ज़ बाज़ार से प्राइवेट सेक्टर को 'क्राउड आउट' कर देता है, निजी निवेश में झिझक पैदा करता है और भावी उत्पादन क्षमता पर असर डालता है। राजकोषीय घाटा भुगतान संतुलन पर भी असर डालता है, जैसा कि भारत में 1991 में हुआ था।

63. बड़े राजकोषीय घाटे से उभरने वाली बड़ी चिंता, खासतौर पर रिज़र्व बैंक के परिप्रेक्ष्य से, यह है कि यह सकल माँग में वृद्धि करता है जिससे मुद्रा स्फीतिगत दबाव पैदा हो जाता है। निजी क्षेत्र को ''क्राउड आउट'' करने से राजकोषीय घाटा भी अवरोधित होता है, यदि निजी क्षेत्र को किए जाने वाले मौद्रिक नीति ट्रांसमिशन को कोई क्षति ग्रस्त नहीं करता है, तो भी। अतः विश्वसनीय राजकोषीय समेकन मुद्रास्फीति को स्थिर करने और मुद्रास्फीति रहित वृद्धि पाने के लिए एक आवश्यक पूर्व शर्त है।

राजकोषीय समेकन तथा वृद्धि

64. निस्संदेह कुछ सीमांत चिंताएँ हैं कि एक 'धीमी-गति-वृद्धि वातावरण' में, राजकोषीय समेकन, केवल वृद्धि को और धीमा करेगा जिससे राजस्व पर प्रतिकूल असर पड़ेगा और अर्थव्यवस्था नीचे की ओर बढ़ रहे एक दुष्चक्र की ओर धकेल दी जाएगी। इस तर्क की कुछ वैधता है परंतु राजकोषीय समेकन के कारण वृद्धि का धीमापन अपरिहार्य नहीं है। वृद्धि के धीमेपन को कम किया जा सकता है बल्कि वृद्धि को बढ़ाया भी जा सकता है बशर्ते राजकोषीय समायोजन की मात्रा के साथ उसकी गुणवत्ता पर भी ध्यान दिया जाए। अनुभव बताता है कि यदि जीडीपी के अनुपात के रूप में कुल व्यय को काट भी दिया जाए तो भी यह वृद्धि को धीमा नहीं करेगा, बल्कि इसके उलट, यदि चालू व्यय से पूँजी व्यय में स्विचिंग हो तो राजकोषीय समेकन, निजी निवेश के ''क्राउडिंग इन'' द्वारा, वृद्धि को और प्रेरित कर सकता है।

65. भारत के लिए अनुभवजन्य आकलन इस निष्कर्ष को वैध बताते हैं - जीडीपी के अनुपात के रूप में कुल सरकारी खर्च में गिरावट के परिप्रेक्ष्य में भी यदि सरकार पूँजी खर्च को बढ़ाती है तो राजकोषीय समेकन से मध्यावधि वृद्धि संभावनाओं में सुधार हो सकता है जिससे अल्पावधि में वृद्धि के निम्नकारी प्रभाव का हिसाब चुकता हो सकता है। इन परिणामों से पूँजी व्यय के लिए उच्चतर दीर्घावधि राजकोषीय गुणक परिलक्षित होते हैं और चालू व्यय के लिए बहुत कम दीर्घावधि गुणक परिलक्षित होताहै।

66. राजकोषीय समेकन का अर्थशास्त्र एकदम सीधा सादा है, जटिलताएँ राजनैतिक आर्थिकी से पैदा होती हैं। राजकोषीय समेकन की दो लड़ियाँ - कर में वृद्धि और व्यय का कम्प्रेशन - कभी भी राजनीतिक रूप से लोकप्रिय नहीं होती। खास कर ऐसे प्रजातान्त्रिक देशों में, जहाँ राजनैतिक एक्ज़िक्यूटिव्स, प्रायः विश्व में हर जगह, उच्च डिस्काउंट दरों द्वारा विशेषीकृत होते हैं, वे अल्पावधि राजनैतिक परिणामों से अधिक लालायित होते हैं न कि दीर्घावधि धारणीयता से। राजकोषीय समेकन, परिभाषा के अनुसार एक दीर्घावधि खेल है। अल्पावधि में राजनैतिक लागत लाभों से अधिक हो सकती है मगर दीर्घावधि में आर्थिक और राजनैतिक लाभ, लागतों से कहीं अधिक होते हैं। आर्थिक और राजनैतिक दृष्टियों का यही सामंजस्य राजकोषीय समेकन का आधार होना चाहिए।

निष्कर्ष : भारतीय वृद्धि की कहानी अक्षुण्ण है

67. अब मैं संक्षेपण की ओर आता हूँ। मैंने आपसे भारत के सामने आने वाली तीन वृहद् आर्थिक चुनौतियों पर चर्चा की और उनके संबंध में रिज़र्व बैंक का परिप्रेक्ष्य बताया। ये चुनौतियाँ है :

i. वृद्धि मुद्रास्फीति गतिशीलता का प्रबंधन

ii. बाह्य क्षेत्र की भेद्यता को कम करना

iii. राजकोषीय समेकन की राजनैतिक आर्थिकी का प्रबंधन

68. ये चुनौतियाँ काफी विकट हैं परंतु ऐसी नहीं कि इन पर काबू न पाया जा सके। जो निराशावादी हैं, उन्हें यह याद रखना चाहिए कि भारत की विकास कथा के चालक तत्त्व एकदम उत्साही उद्यमशीलता, भौगौलिक लाभ, एक विशाल और निरंतर बढ़ता मध्यम वर्ग, उत्पादकता का लाभ लेने के

अवसर, प्रजातंत्र तथा एक बहुत अच्छी कानूनी प्रणाली - ये सभी बरकरार हैं।

69. बारहवीं पंचवर्षीय योजना का लक्ष्य, योजनावधि (2012-17) के लिए, 8.2 प्रतिशत की वृद्धि दर है। वृद्धि की यह न्यूनतम आवश्यक गति है। यदि भारत को अपने करोड़ों लोगों को गरीबी से उबारना है तो इसे न केवल तेज़ गति से बढ़ना होगा बल्कि द्विअंकीय धारणीयता से चलना होगा। इस परिकल्पना पर खरा उतरने के लिए भारत की विकास-गाथा के पास सभी आवश्यक तत्त्व विद्यमान हैं।

70. परंतु भारत की विकास गाथा अपरिहार्य नही हैं गतिशील और सार्थक, संरचनात्मक और गवर्नेंस सुधारों के अभाव में यह रूपायित नहीं होगी। इसलिए हमारा ध्यान सुधारों की ओर निरंतर लगा ही रहना चाहिए।